द्वितीय अध्याय :

छायावाद युग पृष्ठभूमि

२ - छायावाद युग : पृष्ठभूमि

राजनीतिक पृष्ठभूमि :

जैसा पहले कहा जा चुका है कि भारतीय-स्वातंत्र्य आन्दोलन का प्रारम्भ १८५७ में होता है । तब से १९ वीं शदी के अन्त तक का समय सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय जागृति का समय है । सुधार, आन्दोलनों और कांग्रेस का जन्म इसी समय होता है । इस काल में राष्ट्र प्रेम, राजनिष्ठा और धर्म निष्ठा का समन्वय है । इस समय के भारतवासी अंग्रेजों, उनकी अंग्रेजी पद्धति की शिक्षा, शासन और साम्राज्य के प्रति बड़े ही श्रद्धालु और वफादार थे । भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के इतिहास में पट्टाभि सीता रमैया ने लिखा है कि - ' हम एक महान और स्वतंत्र साम्राज्य के नागरिक हैं और हम विश्व के सबसे उदार संविधान की छत्र छाया में रह रहे हैं ।'[१]

इस समय भारतीय आन्दोलनों को विदेशी भी सम्मानपूर्ण दृष्टि से देखते थे और उत्तर में भारतीय उन्हें । इस प्रकार एक पारस्परिक सम्मान की भावना आयी । सामयिक राज्य व्यवस्था के प्रति संतोष ही मिलता है ।[२] १९१६ में गोखले की मृत्यु के कारण कांग्रेस में ऐसी स्थिति आ गयी, जिसमें मुस्लिम और हिन्दू संयुक्त रूप से कार्य करने को बाध्य हुए । देश की उन्नति में इसका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा ।[३]

इसी समय प्रथम विश्व युद्ध की भयंकर विभिषिका से समस्त विश्व आक्रान्त हो उठा । प्रथम विश्व युद्ध (१९१४ - १९१९) से ब्रिटिश साम्राज्यवाद को गहरा आघात लगा । भारत में प्रतिनिधित्व के आधार पर सरकार चलाने की मांग होने लगी । साम्राज्यवाद की डांवा-डोल स्थिति ने भारत में कड़ा रुख अपनाया । भारतीयों ने प्रथम महायुद्ध

---

१ - डा० पट्टाभि सीता रमैया : दी हिस्ट्री आफ दी इंडियन नेशनल कांग्रेस, पेज १०१ ।
२ - आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका : डा० बलभद्र तिवारी, पृष्ठ - १४६ ।
३ - डा० पट्टाभि सीता रमैया : दी हिस्ट्री आफ दी इंडियन नेशनल कांग्रेस, पेज १०४ ।

में अंग्रेजों की सहायता की परन्तु उससे उन्हें कुछ न मिला । १९१९ में मोन्टेग्यू चेम्स फर्ोड सुधारों से भी कोई लाभ नहीं हुआ । रोलेट ऐक्ट का दमनकारी अन्याय-पूर्ण चक्र चला । विरोध करने पर जनरल डायर ने जलियानावाला बाग में गोलियां चलवायी । राष्ट्रीय आन्दोलनों को इससे प्रगति मिली । १९१९ में सामुहिक असंतोष जन्य अनेकानेक हड़तालों ने राष्ट्रीय जागरण में योग दिया । गोखले की मृत्यु ने दो दलों में विभक्त कांग्रेस स्वराज्य की स्थापना के उद्देश्य से मिलकर एक हो गई । गांधी जी के नेतृत्व में आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ । इस समय जन-समूह में कांग्रेस की बढ़ी सहायता की । गांधी जी का प्रत्येक वाक्य जनता के लिए मंत्र बन गया । गांधी जी का मार्ग शान्तपूर्ण मार्ग था । अब तक देश में कई लोहे और फलोलाद के कारखाने खुल चुके थे । अनेक कंपनियों की रजिष्ट्री भी और उनका कारोबार भी अच्छा चला । परन्तु सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया था कि वह भारत के पूंजीपतियों बड़े-बड़े व्यवसायियों एवं मध्यम श्रेणी के लोगों का सहयोग प्राप्त करे । युद्ध के पहले भारतीय सरकार के प्रधान विरोधी मध्यम श्रेणी के लोग थे । जमींदार, बड़े-बड़े व्यवसायी प्राय: राजभक्त थे और सामान्य जनता को अधिकारों का ज्ञान था ।[१] कांग्रेस अब तक एक शक्तिशाली संस्था बन चुकी थी । क्योंकि उसे सभी का सक्रिय सहयोग प्राप्त हो रहा था । १९२१ में बेजवाड़ा कांग्रेस के अधिवेशन में खादी का प्रचार किया गया । खादी के स्वदेशी वस्त्रों को पहन कर विदेशी माल का बहिष्कार किया गया । विदेशी वस्त्रों की होली जली । कारावास सम्मान का विषय बना ।[२]

भारतीयों में अंग्रेजों के प्रति भक्ति-भावना उद्बुद्ध करने के लिए अंग्रेजों ने प्रिंस आफ वेल्स को भारत भेजा परन्तु यहां उनका कोई स्वागत नहीं हुआ । मोती लाल नेहरू और सी०आर०दास की एक नयी नीति चली । वे चुन कर कौंसिलों तक पहुंचे और वहां

---

१ - राष्ट्रीयता और समाजवाद : आचार्य नरेन्द्र देव : पृष्ठ - ५८ ।

२ - And advanced History of India," R.L. Majumdar," Part III, p.985.

सरकार का विरोध करते रहे । १९२३ में देश में साम्प्रदायिक दंगे हुए । ३ फरवरी १९२८ को साइमन कमीशन भारत आया । इस कमीशन में एक भी भारतीय सदस्य न था । अतः कांग्रेस ने सभी राजनीतिक दलों से असहयोग की अपील की । मुस्लिम लीग, उदारदलीय संघ और कांग्रेस तीनों ने मिल कर ' साइमन वापस जाओ ' का नारा लगाया ।

१९२७ में कांग्रेस ने निश्चय किया कि हम सरकार को युद्ध संबंधी मामलों में सहयोग नहीं देंगे । इसी वर्ष साम्राज्यवादी विरोध प्रदर्शित करने के लिए इंटरनेशनल कांग्रेस की स्थापना की गयी जिसमें चीन, मिस्त्र, फारस, सिरिया, अनाम, कोरिया, मोरक्को और मेक्सिको आदि कई देशों से प्रतिनिधि आये । भारत के प्रतिनिधि थे पं० जवाहर लाल नेहरू । १९२७ में ही मद्रास में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ । नेहरू जी ने साम्राज्य विरोधी संघ का साथ दिया । उक्त अधिवेशन में कांग्रेस ने पूर्ण स्वतंत्रता को अपना लक्ष्य बनाया । १९२८ में बारडोली के सत्याग्रहियों के समक्ष सरकार को झुकना पड़ा । परिणामतः स्वरूप नवयुवकों में एक नवीन आशा और उत्साह का संचार हुआ । उन्होंने डट कर कांग्रेस का साथ दिया । १९२९ तक हड़तालों, असहयोग आन्दोलनों का तांता लग गया । सरकार ने इसी समय क्रमिक रूप से औपनिवेशिक स्वराज्य देने की घोषणा की परन्तु भारतीय जनता को इससे विश्वास न दिलाया जा सका । इस समय तक स्वराज्य पार्टी के नाम से ही कांग्रेस कार्य कर रही थी ।[१]

स्वराज्य पार्टी के एक नेता के रूप में उसके सदस्यों के समक्ष भाषण भी सी० आर० दास ने कहा कि हमारा स्वराज्य ९८ प्रतिशत लोगों का होगा । फलतः उन्होंने मजदूरों, कृषकों और सामान्य जनों से सहयोग की अपील की । इस प्रकार स्वराज्य पार्टी सिद्धान्तः समस्त भारतीय जन समूह का प्रतिनिधित्वकरती थी । परन्तु व्यवहारिक दृष्टि से उसमें उच्च वर्गीय लोग ही थे । इस पार्टी की घोषणा में कहा गया कि सदस्यगण अपनी निजी बल और अबल सम्पत्ति रख सकेंगे, उसका संबर्द्धन

---

१ - India today and tomorrow, "R. Palm Dutta", p.150.

और इसका अधिकार उन्हें प्राप्त होगा ।[१]

साम्राज्यवाद की इस डांवाडोल स्थिति में स्वराज पार्टी के कतिपय नेता व्यवहारिक रूप से साम्राज्यवाद से समझौते के लिए प्रयत्नशील थे । ये लोग उच्च वर्ग के थे, अत: इनका यह कार्य स्वभाविक ही था ।[२] ज्योंहि सरकार ने इन्हें प्रलोभन दिया कि ये लोग तैयार हो गये । साम्राज्यवाद में इनमेंसे कतिपय लोगों को धर दबाया । मध्य वर्ग पुन: जनता के सहयोग की ओर उन्मुख हुआ । कृषक और मजदूर संघो की स्थापना हुई और उससे राष्ट्रीय आन्दोलन को बल मिला । इन आन्दोलनों को दबाने के लिए सरकार ने सैनिक सहायता ली परन्तु गढ़वाली सैनिकों ने पेशावर में गोली चलाने से इंकार कर दिया । इस अविस्मरणीय घटना से अंग्रेज कांप उठे । परिणामत: गांधी - इरविन समझौता हुआ और प्रदर्शन में बंदी व्यक्तियों को रिहा कर दिया गया । सन् १९३० में गांधी का दांडी सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ । भारतीय जनता ने अंग्रेजों के दमन के प्रत्युत्तर में अपनी शक्ति, साहस, सहनशीलता का अद्भुत परिचय दिया ।

सन् १९३३ में गांधी ने हरिजनों के प्रति देश के लोगों का हृदय परिवर्तन करने के लिए अपना उपवास प्रारम्भ किया । सन् १९३४ में गांधी जी ने कांग्रेस से अपने को अलग कर लिया क्योंकि अनेक कांग्रेसी कार्यकर्ता उनके शान्तिपूर्ण अहिंसात्मक आन्दोलनों से असहमत और असंतुष्ट थे । साम्राज्यवाद में अपने विद्रोहियों के दमन का चक्र उठाया । वृद्धों और शिशुओं के बलिदान हुए, ग्रामों को जला जाने लगा, हाथी के पीठ से पटकना और आम के वृक्षों से लटकाकर फांसी देना आदि साधारण बातें हो गयीं ।[३] इतने पर भी भारतीय जनता ने कभी आत्म समर्पण नहीं किया और अगले ही दो वर्षों में

---

१ - India today and tomorrow, R. Palme Dutta, p.151.

२ - आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका : डा० बलभद्र तिवारी : पृष्ठ-१५० ।

३ - हिन्दुस्तान की कहानी : नेहरू : पृष्ठ - ४०२ ।

भयंकर रूप में साम्राज्यवाद को आघात दिया । परिणाम स्वरूप और ही अधिक शक्ति से जनता में आन्दोलन में भाग लिया । जिसमें स्वशक्ति, आत्म निर्णय, आत्मोसर्ग और राष्ट्रीय एकता की भावना प्रबल थी ।[१] सन् १९३६ की लखनउन कांग्रेस अधिवेशन में सरकार की नीतियों पर कड़ा रुख अपनाया । अब तक जेलों में २१ हजार नजरबन्दी थे । नेताजी की नजरबन्दी ने इसे और भड़काया । देश में गृह्युद्ध का सूत्रपात हुआ । सरकार द्वारा दमन चक्र तेज हुआ । गांधी जी ने ' करो या मरो ' का नारा बुलन्द किया । भारतीय जनसमूह में स्वातंत्र्य प्रेम उमड़ पड़ा । यही समय है जब द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ ।

हमारा छायावादी काव्य इस समय तक अपने चरम विकास पर पहुंच चुका था । युग की ये समस्त प्रवृत्तियां छायावादी काव्य में कहीं निराशा और कहीं आशा, कहीं राष्ट्र प्रेम के माध्यम से व्यक्त हुई । एक तरफ जहां आन्दोलनों की असफलता से उच्च पदों के द्वार भारतीयों के लिए बन्द होने के कारण नवयुवकों में निराशा आयी । वहीं दूसरी ओर महात्मा गांधी के नेतृत्व में सत्य, अहिंसा, प्रेम आदि की जिन उदात्त भावनाओं को प्रोत्साहन मिला उन सबकी अभिव्यक्ति छायावादी काव्य में हुई । हमारे कतिपय आलोचकों का यह कथन कि जिस युग के राजनीतिक इतिहास में इतना महान परिवर्तन हुआ उस युग में रह कर भी छायावादी कवि अपने देश की स्वतंत्रता के लिए एक ही पंक्ति नहीं लिख सका, भ्रान्त ही है । प्रसाद, निराला आदि की कविताएं उत्तर स्वरूप प्रस्तुत की जा सकती हैं ।

स्पष्टत: युग के राजनीतिक पराभव की छाया हमारे इस काव्य में है । ' राजनीति में ब्रिटिश साम्राज्य की अचल सत्ता और समाज में सुधारवाद की दृढ़ नैतिकता असंतोष और विद्रोह को बहिर्मुखी अभिव्यक्ति का अवसर नहीं देती थी । निदान वे अन्तर्मुखी होकर धीरे-धीरे अवचेतन में जाकर बैठ रही थी और वहां से क्षतिपूर्ति के लिए छायाचित्रों की सृष्टि कर रहीं थी ।[२]

---

१ - India today and tomorrow, R. Palm Dutta, p.178.

२ - डा० नगेन्द्र : विचार और अनुभूति , छायावाद की परिभाषा शीर्षक लेख

इसीलिए गंगा प्रसाद पाण्डेय ने लिखा है कि -

` मैं स्वयं छायावाद को देश व्यापी जीवन की दुर्व्यवस्थाओं की साहित्यिक प्रतिक्रिया मानता हूं ।` [१]

सामाजिक पृष्ठभूमि :

छायावाद युग में सामाजिक स्वतंत्रता का अपेक्षाकृत अभाव था । उदाहरण स्वरूप हम निम्न बातों को दृष्टिगत कर सकते हैं :-

(१) विवाह प्रथा भारतीय समाज में एक पवित्र प्रथा मानी जाती है । यह दो आत्माओं का मिलन समझा जाता है । परन्तु यह संस्था भी उस समय दूषित हो चुकी थी । पति पत्नी स्वतंत्र रूप से एक दूसरे का वरण नहीं कर पाते थे । उनके इस मार्ग में जाति पात, कुल गोत्र, मान-मर्यादा आदि की ऐसी चट्टानें खड़ी हुई थीं कि उन्हें तोड़कर आगे बढ़ना उनके बस की बात नहीं थी । फलतः उनके प्रेम और विवाह के स्वप्न सामाजिक रूढ़ियों से टकराकर चूर-चूर हो जाते थे । चाहे ` प्रेम पथिक ` का नायक हो या ` ग्रन्थि ` ` उच्छ्वास `, ` आंसू ` आदि का असफल प्रेमी, उनके स्वर में इसी निराशा की अनुगूंज है । पुनश्च समाज में बाल-विवाह, तिलक, दहेज, गौना की विकृत दुर्व्यवस्था से भारतीय समाज गिरफ्तार था ।[२]

(२) भारतीय समाज की रूढ़िग्रस्तता का एक यह भी प्रमाण था कि यह समुद्र यात्रा को निकृष्ट और विधर्मी कृत्य समझता था ।

(३) समाज में अस्पृश्यता का बोलबाला था । अनके लिए देवालय इत्यादि के द्वार बन्द थे और इनसे बचकर रहने का आदेश दिया गया । अछूत वर्ग से घृणा करने का परिणाम यह हुआ कि इस वर्ग का विकास रुका और उसकी प्रतिभा भी मारी गयी ।

---

१ - महाप्राण निराला : गंगा प्रसाद पाण्डेय : पृष्ठ - १४६ ।

२ - आत्म कथा : डा० राजेन्द्र प्रसाद : पृष्ठ - २० और २४ ।

(४) वर्ण व्यवस्था की नींव पाश्चिमी सभ्यता ने हिला दी । नवीन व्यवस्था के फलस्वरूप प्राचीन सामाजिक वर्ण व्यवस्था सड़ियल मालूम हुई ।

(५) समाज सुधारक संस्थाओं - ब्रह्म-समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन और थियोसोफिकल सोसाइटी ने भी दलगत संकीर्णता थी ।[१]

(६) विधवाओं की दशा भी दयनीय थी । उन्हें पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी ।

इन्हीं विषम सामाजिक परिस्थितियों में गांधी जी का आगमन हुआ । उनका नारी-जागरण कार्यक्रम सामाजिक उन्नति के विशेष कार्यक्रमों में एक था । अब तक समाज में नारी भोग्या समझी जाती थी । अतः नारी शिक्षा का प्रचार-प्रसार कार्य वेग से चला और युग - युग की बंदिनी नारी घुटन के प्रतीक पर्दे को फाड़कर मुक्त पवन में आई ।[२] अस्पृश्यता के उन्मूलन ने गांधी जी के प्रयास इस युग में महत्वपूर्ण हैं । देश की राष्ट्रीय एकता के लिए अछूतों को समान स्थान आवश्यक था । नवीन शिक्षा की जड़ें शनैः शनैः समाज में अपना प्रसार करने लगी । लोग इस आडम्बरी समाज की भर्त्सना करने लगे । उपरवर्णित बाल-विवाह, विधवा - विवाह निषेध और जाति प्रथा के दोषों से व्यक्ति परिचित हुये और उनमें सुधार चाहने लगे । समाज की दृष्टि नवीन पुनरुत्थान की ओर लगी । एकता का भाव राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रसरित हुआ ।

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि :

इस युग के सांस्कृतिक पुनरुत्थान ने आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन और ब्रह्म समाज के द्वारा देश में वैदिक धर्म के प्रति नव जागृति कर दी । इसके पूर्व अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीय विद्यार्थियों में यह भावना भर दी थी कि उनका धर्म, उनकी

---

१ - युग और साहित्य : शान्ति प्रिय द्विवेदी : पृष्ठ - १४६ ।

२ - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य : डा० रामेश्वर दयाल खण्डेलवाल, पृष्ठ - ३१६ ।

भाषा, उनकी सभ्यता, अंग्रेजों धर्म, भाषा और सभ्यता से हेय और निकृष्टतर हैं।[१] भारत में ईसाइयत का प्रचार ईसाइयों द्वारा भारतीय धर्मों की निन्दा, यूरोप के क्रान्तिकारी, बुद्धिवादी विचार और अंग्रेजी पढ़े लिखे हिन्दुओं द्वारा हिन्दुत्व की भर्त्सना, ये कुछ कारण थे। जिनसे हिन्दुत्व की नींद टूटी। उसकी पहली अंगड़ाई ब्राह्म समाज में प्रकट हुई और उसके नवोत्थान के आदि पुरुष राजाराम मोहन राय हुए उन्होंने जो कुछ किया, उसे हम सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का कार्य कह सकते हैं। भारत की राजनैतिक राष्ट्रीयता इसी सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का विकसित रूप है।[२] राम मोहन ने यह निष्कर्ष निकाला कि भारत के प्राचीनतम सत्यों का योरोप के नवीन सिद्धान्तों के साथ सामंजस्य दिखाये बिना भारत का कल्याण नहीं है। परिणामतः उन्होंने वेदान्त और विज्ञान का समन्वय किया और इसी के बल पर भारत की समस्याओं का निदान भी। उन्होंने विधवा विवाह, स्त्री शिक्षा और सती प्रथा विरोध आदि विषयों की श्री वृद्धि के लिए अधिक प्रयास किया और ब्रह्म समाज की स्थापना की।

उनकी मृत्यु के बाद ब्रह्म समाज का नेतृत्व महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर ने किया। उन्होंने तत्व - बोधिनी सभा की स्थापना की। सन् १८४३ में यह ब्राह्म समाज में विलीन कर दी गयी। केशवचन्द्र सेन ने इस सांस्कृतिक समुन्नयन में अपना योगदान दिया।

इधर महाराष्ट्र में परमहंस समाज नामक एक संस्था बनी थी जिसका उद्देश्य जाति प्रथा का अंत था। १८६४ में जब केशव चन्द्र सेन बम्बई पहुंचे तो उन्होंने प्रार्थना समाज की स्थापना की। इसके चार उद्देश्य थे - १- जाति प्रथा का विरोध, २ - विधवा विवाह का समर्थन, ३ - स्त्री शिक्षा का प्रचार और ४ - बाल विवाह का अवरोध। प्रार्थना समाज सभी धर्मों में सन्नवय की चाहता था। जिस प्रकार बंगाल में हिन्दू नवोत्थान के पहले नेता राजाराम मोहन राय हुये, उसी प्रकार महाराष्ट्र में इस आन्दोलन का

---

१ - इंडिया एन्ड हर प्राब्लम्स : स्वामी विवेकानन्द : पृष्ठ -४८ - ४९।

२ - संस्कृति के चार अध्याय : दिनकर : पृष्ठ - ५४१।

श्री गणेश महादेव गोविन्द रानाडे ने किया । बौद्धिक ऊंचाई में रानाडे प्राय: राममोहन राय के समकक्ष थे ।[१] रानाडे प्रधानत: समाज सुधारक थे । महाराष्ट्र के अन्य सुधारकों में गोखले और तिलक भी थे ।

इसी समय भारत के सांस्कृतिक क्षितिज पर स्वामी दयानन्द जी का आविर्भाव हुआ । जब स्वामी जी १८७२ में कलकत्ते पधारे तो देवेन्द्र नाथ ठाकुर और केशव चन्द्र सेन ने उनका बड़ा आदर किया । केशव चन्द्र जी ने उन्हें सलाह दी कि आप संस्कृत छोड़कर हिन्दी में बोलें । स्वामी जी ने पुन: भारतीयों में भारत के अतीत के प्रति सम्मान की भावना जगायी । इसके पूर्व हिन्दू समाज हीनत्व ग्रन्थि से निगडित था । परन्तु, आर्य समाज के उदय के बाद अविचल उदासीनता की यह मनोवृत्ति विदा हो गयी । हिन्दुओं का धर्म एक बार फिर जगमगा उठा ।

श्रीमती एनीबिसेंट ने भी भारत के सांस्कृतिक जागरण में जो स्तुत्य योगदान दिया । जब ईसाई मिशनरी भारत के बाहर भारत के विषय में खूब प्रचार करके यहां के लोगों को ईसाई बना रहे थे, तब इस महिला ने खुलकर भारत और हिन्दुत्व का पक्ष लिया ।[२] इस उत्थान में रामकृष्ण परमहंस ने भी महत्वपूर्ण योग दिया । उन्होंने तर्क के बदले अनुभूति को प्राथमिकता दी । मानव-मानव में व्याप्त विभेद की खाई को उन्होंने पाटना चाहा । उनका धर्म विषयक दृष्टिकोण व्यवहारिक था और वे सर्वधर्म समन्वय पर बल देते थे ।

रामकृष्ण परमहंस के प्रसिद्ध शिष्य हुए स्वामी विवेकानन्द । रामकृष्ण और विवेकानन्द एक ही जीवन के दो अंश, एक ही सत्य के दो पक्ष हैं । रामकृष्ण अनुभूति थे तो विवेकानन्द उसकी व्याख्या बन कर आये । रामकृष्ण दर्शन थे, विवेकानन्द ने उनके क्रिया पक्ष का आख्यान किया । स्वामी निवेदानन्द ने रामकृष्ण को हिन्दू धर्म की गंगा

---

१ - संस्कृति के चार अध्याय : दिनकर : पृष्ठ - ५५२ ।

२ - तदेव पृष्ठ - ५६८ ।

कहा है, जो वैयक्तिक समाधि के कमंडल में थी । विवेकानन्द इस गंगा के भगीरथ थे । और उन्होंने देव सरिता को रामकृष्ण के कमंडल से निकाल कर सारे विश्व में फैला दिया । राम मोहन राय के समय से भारतीय संस्कृति और समाज में जो आन्दोलन चल रहे थे वे विवेकानन्द में आकर अपनी चरम सिमा पर पहुँचे । राम मोहन, केशव सेन, दयानन्द, रानाडे, एनीबिसेन्ट, राम कृष्ण एवंम अन्य चिन्तको तथा सुधारकों ने भारत में जो जमीन तैयार की, विवेकानन्द उनमें से अश्वत्थ होकर उठे । अभिनव भारत को जो कुछ कहना था, वह विवेकानन्द कह चुके थे । विवेकानन्द वह सेतु है जिसपर प्राचीन और नवीन भारत परस्पर आलिंग्न करते हैं । विवेकानन्द नें वेदान्त दर्शन के आधार पर विज्ञान और धर्म, राजनीति और धर्म, पाश्चात्य भौतिकता और पौवात्य आध्यात्मिकता, भारतीय मन एवं पाश्चात्य शरीर का जो सुन्दर समन्वय कर एक विश्ववाद, अन्तर्राष्ट्रीयता और शाश्वत मानव धर्म की व्याख्या की, वह हमारी संस्कृति के इतिहास में अमर है । विराट् पूजा के माध्यम से विश्व धर्म, विश्व बन्धुत्व और विश्ववाद की भावना का प्रचार विवेकानन्द ने किया ।[१]

विवेकानन्द की इस कड़ी में एक महान कार्य तिलक ने किया । उन्होंनें गीता का भाष्य लिखते हुए कर्मवाद के सिद्धान्त को व्यावहारिक क्षेत्र में लाने का संदेश दिया । राजनीति के क्षेत्र में भी तिलक का नारा "स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है" इसी कर्मवाद का व्यावहारिक पक्ष है । हिन्दू जाति लोकमान्य की चिर ऋणी रहेगी कि निवृत्ति का आलस्य छुड़ाकर उन्होंने उसे प्रवृत्ति के पथ पर लगा दिया ।[२]

भारतीय सांस्कृतिक क्षितिज पर महर्षि अरविन्द का आगमन एक नवज्योति का संचरण था । अरविन्द ने विवेकानन्द के वेदान्ती अद्वैतवाद से योग का सम्मिलन कर अति-मानव और अतिमानस की विचारधारा का प्रवर्तन किया । डारविन का विकासवादी चिंतन

---

१ - आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका : डा० बलभद्र तिवारी : पृष्ठ-१५६ ।
२ - संस्कृति के चार अध्याय : दिनकर : पृष्ठ-६१५ ।

जहां जाकर रूक जाता है वहीं से अरविन्द की चिन्तन धारा प्रारम्भ होती है। मनोवैज्ञानिक आधार पर उनकी इस चिन्तना के दो पक्ष हैं - अधोविकास और उर्ध्व विकास (Envolution and evolution) । अधो विकास में क्रम से अतिमन, क्रमश: प्राण और पदार्थ पर चेतना आती है। उर्ध्व विकास में चेतना पदार्थ से उत्पन्न होती है। अरविन्द के अनुसार मानव ही विकास क्रम में अतिमानव बनता है। अत: सबको अपना विकास करना चाहिए जिससे भविष्य में सत्य का सजीव प्रत्यय हो। लगभग १०० वर्षों तक इस आध्यात्मिक देश ने जो आत्म-मंथन किया, पराधीनता की ग्लानि को धोने के लिए अपनी श्रेष्ठ शक्तियों का जो चिंतन और ध्यान किया, गांधी जी उसी तपस्या के वरदान बनकर प्रकट हुए। नवोत्थान से प्रेरित भारत अपनी भी स्वाधीनता खोज रहा था और विश्व की समस्याओं का समाधान भी। महात्मा गांधी ने उसकी दोनों कामनाएं पूर्ण की। हमारे सांस्कृतिक जागरण में महात्मा गांधी ने महान योगदान दिया। उन्होंने सत्य, अहिंसा, प्रेम के बल पर अपने राजनीतिक संघर्ष का समारम्भ किया। गांधी जी ने धर्म का प्रवेश जीवन के समस्त क्षेत्रों में माना और उन्होंने धर्मानुप्राणित राजनीति को प्रश्रय दिया। उनकी राजनीति चाणक्य और मैकियाविली की इस छद्म युक्त राजनीति न थी। गांधी जी ने कहा था कि जो बात वैयक्तिक जीवन में गलत है, वह बृहद् स्तर पर राजनीतिक और सामाजिक जीवन में ठीक नहीं हो सकती। महात्मा गांधी को आत्मा की अपार शक्ति में अगाध विश्वास था और इसी के बल पर उन्होंने यह उद्घोष भी किया कि विश्व के दूसरे देश पाशविक शक्ति के उपासक हैं और भारत उन सभी को आत्म बल से जीत सकता है। भारत की स्वतंत्रता विश्व कल्याण के लिए चाहते थे।[१]

इस प्रकार महात्मा गांधी ने युग की सुविचारित भावभूमियों के क्षितिज का विस्तार किया, सिद्धान्त को व्यवहार में परिणत किया सत्य, अहिंसा और प्रेम के अभिनव प्रयोग कर आत्मा की शक्ति का चरम परम निदर्शन कर मानव महत्व को प्रश्रय

---

१ - Noble Men & Manners: "India of my dreams": M.K. Gandhi, p. 5.

दिया । उन्होनें व्यापक धरातल पर विश्ववाद और मानवधर्म की व्याख्या की जो हमारा मार्ग दर्शन युग-युग तक करता रहेगा ।

महर्षि रविन्द्र नाथ टैगोर भी इस क्षेत्र में कभी भी नहीं भुलाए जा सकते हैं । कवीन्द्र रविन्द्र भारतीय पुनर्जागरण के अग्रदूत बनकर आये । उन्होनें भारतीय साहित्य को नवीन प्रेरणा का आलोक, नवीन भावों का वैभव, नवीन कल्पना का सौन्दर्य, नवीन छन्दों का स्वर झंकृति प्रदान कर उसे विश्व प्रेम तथा मानवतावाद के व्यापक धरातल पर उठा दिया । कवीन्द्र के युग में जो महान प्रेरणा हिन्दी काव्य साहित्य को मिली वह वास्तव में छायावाद के रूप में विकसित हुई । [१]

हमारी सांस्कृतिक प्रगति और उपलब्धियों का एक संक्षिप्त इतिहास है । इस सांस्कृतिक जागृति से उस युग के काव्य, नाटक, और उपन्यास आदि में रूप और आकार ग्रहण किये । हिन्दी का तद्युगीन काव्य इसी नवीन सांस्कृतिक जागरण से संपृक्त होने के कारण परम्परागत काव्य दृष्टि वालों को अपरिचित सा जान पड़ा । इस महान आन्दोलन में भारतीय जनता के चित्त को बन्धन मुक्त किया । यही बंधन मुक्त चित्त काव्यों, नाटकों और उपन्यासों में नानाभाव से प्रकट हुआ । परन्तु काव्य में वह जिस रूप में व्यक्त हुआ वह कुछ काल तक अपरिचित जैसा लगा । [२]

कुल मिलाकर, छायावाद एक विशाल सांस्कृतिक चेतना का परिणाम था । यद्यपि उसमें नवीन शिक्षा के परिणाम होने के चिन्ह स्पष्ट हैं तथापि वह केवल पाश्चात्य प्रभाव नहीं था । कवियों की भीतरी व्याकुलता ने ही नवीन भाषा शैली में अपने को अभिव्यक्त किया और सभी उल्लेखनीय कवियों ने थोड़ी बहुत आध्यात्मिक व्याकुलता भी । जिन कवियों ने शास्त्रीय और सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह का भाव दिखाया उनके इस भाव का कारण तीव्र सांस्कृतिक चेतना ही थी । [३] इस प्रकार एक निश्चित तथ्य जो यह है कि छायावाद की पृष्ठभूमि में सांस्कृतिक जागरण के आध्यात्मिक आन्दोलन थे । [४]

---

१ - गद्य पद्य : आधुनिक काव्य के प्रेरणा - स्त्रोत , पृष्ठ - १५१ ।
२ - हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास : डा०हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-३०० ।
३ - तदेव पृष्ठ-४६२ ।
४ - निराला काव्य : पुनर्मुल्यांकन : डा० धनन्जय वर्मा, पृष्ठ - ५१ ।

साहित्यिक पृष्ठभूमि

जहाँ एक ओर छायावाद की पृष्ठभूमि में हमारी राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का योगदान रहा वहीं स्वसाहित्यगत पृष्ठभूमि ने भी उसे विकसित होने में कम सहायक नहीं हुई।

संस्कृत साहित्य में छायावाद का मूल ढूंढने का प्रयास :

कतिपय आलोचकों और कवियों के विचार से छायावादी काव्य के मूल में संस्कृत साहित्य का पर्याप्त हाथ रहा है। उनकी दृष्टि में छायावाद को कोरा पाश्चात्य साहित्य का वरदान मानना नितान्त भ्रम है। छायावाद की जड़े प्राचीन संस्कृत साहित्य की भूमि में अमूल है। `इसका मूल भी आज से १४ सौ वर्ष पूर्व कालिदास के वाङ्मय में ही मिलता है। इस पृष्ठभूमि की जानकारी न होने से हम प्राय: हिन्दी छायावादी काव्यधारा की आलोचना करते हुए उसे मात्र अंग्रेजी रोमांटिक काव्यधारा द्वारा प्रभावित मान बैठते हैं और इस धारा की मौलिकता अंग्रेजी काव्य में ही ढूंढते हैं। प्रसाद जी पहले छायावादी कवि हैं जिन्होंने छायावाद संबंधी इस भ्रान्त धारणा का उन्मूलन करने का प्रयास किया और छायावाद शब्द में `छाया` शब्द का अर्थ कालिदास के मेघदूत में इन्द्रधनुष के लिए प्रयुक्त `रत्नच्छाया व्यतिकर इव` इस पंक्ति के आधार पर `कान्ति` किया। इतना ही नहीं प्रसाद ने शैव प्रत्यभिज्ञा दर्शन के आधार पर `रस` की नयी व्याख्या कर छायावादी काव्य की रसवत्ता का प्रतिपादन किया।`[१]

---

१ - `आज` साप्ताहिक विशेषांक, नवम्बर ८, १९७५ में प्रकाशित श्री शंकर शुक्ल का लेख `पश्चिमी वाङ्मय पर भारतीय प्रभाव`।

इस प्रकार प्रसाद के अनुसार छायावाद की नवीन अभिव्यक्ति-भंगिमा प्राचीनकाल में भी अत्यन्त स्पष्टरूप में विद्यमान है। उनमें आत्मस्पर्श की अनुभूति के साथ-साथ आन्तर-भाव-व्यंजना का सौन्दर्य भी द्रष्टव्य है। [१]

अत: छायावादी काव्य का मूल श्री जय शंकर प्रसाद ने कालिदास, कुन्तक और आनन्दवर्द्धन में ढूंढा है। महादेवी वर्मा जी ने उसका मूल उत्स उपनिषदों को माना है। निराला ने भी मुक्तछन्दों की अवतारणा के लिए वेदों तक दौड़ लगाई है। इस प्रकार यह तो स्पष्ट है कि छायावादी साहित्य की पृष्ठभूमि में संस्कृत साहित्य अवश्य ही है।

रीतिकाल की रीतिमुक्त काव्य धारा में :

" दिनकर " जी का कथन है कि हिन्दी में रोमानी आन्दोलन का प्रारम्भ छायावाद से माना जाता है, किन्तु सच पूछिए तो रोमानी भावों का जागरण बोधा और घनानन्द में ही प्रारम्भ हो गया था। [२] इस प्रकार रीतिकाल में ही काव्य में स्वच्छंदता की प्रवृत्ति उभरने लगी थी जिसके संकेत बोधा, घनानन्द, ठाकुर और भारतेन्दु में मिलने लगे थे। " मेरा अनुमान है कि छायावाद के समान कोई आन्दोलन रीतिकाल के अंतिम चरणों में ही समय के गर्भ में आ चुका था। " [३] यदि घनानन्द ने खड़ी बोली में लिखा होता तो वे सरलता से छायावाद के पूर्व पुरुष मान लिए गये होते। किन्तु यह नहीं हुआ, कुछ तो कविता की भाषा बदल जाने के कारण और कुछ पाश्चात्य प्रभावों के, प्राय: सहसा ही पूंजीभूत हो उठने के कारण छायावाद काल की कविता ने

१- छायावादी काव्य : डा० कृष्णचन्द्र वर्मा, पृष्ठ - ४१।
२ - संस्कृति के चार अध्याय : पृष्ठ - ४३५।
३ - चक्रवाल की भूमिका, पृष्ठ - ७।

ऐसा रूप ले लिया जो उसे पूर्व युगों से भिन्न कर देता है ।"[1] घनानन्द, बोधा आदि की कविताओं में आन्तररस्पर्श, अनुभूति की तीव्रता, वेदना की नयी विवृति, टीस और नवीन अभिव्यक्ति के जो दर्शन होते हैं वे रीतिकालीन काव्य की प्रतिक्रिया सम्भूत ही है और वस्तुत: वे ही छायावादी काव्य के प्रारम्भ की ओर इंगित करती है ।

इधर पंतजी के 'पल्लव' की भूमिका से स्पष्ट है कि उनकी कविता समसामयिक या द्विवेदीयुगीन कविता की प्रतिक्रिया नहीं है, बल्कि वह रीतिकालीन कविता की प्रतिक्रिया है जो अब तक साहित्य क्षेत्र की बहुत बड़ी शक्ति बनी हुई थी । भारतेन्दु और द्विवेदी युग की कविताएँ उस युग में इतनी श्रेष्ठ और महनीय नहीं मानी जाती थीं तथा कवित्व की दृष्टि से पंतजी के काव्यारम्भ काल तक क्या उसके भी काफी बाद तक ब्रजभाषा की रीतिबद्ध श्रृंगारिक काव्य परम्परा का ही बोलबाला था । इसलिए हमें यह बात निर्भ्रान्त रूप से मनोगत कर लेना चाहिए कि छायावादी काव्य मूलत: ब्रजभाषा की रीतिबद्ध श्रृंगारिक काव्य परम्परा की प्रतिक्रिया में उठ खड़ा हुआ था, न कि द्विवेदी युगीन काव्य पद्धति की । यह बात प्रसाद, पंत, प्रेमचंद आदि कितने ही तत्कालीन लेखकों के साक्ष्य से सिद्ध है ।[2]

स्पष्टत: छायावाद में रीतिकालीन कविता की प्रतिक्रिया हुई । "रीतिकालीन रूढ़िवाद से थके हुए कवियों ने जब सामयिक परिस्थितियों से प्रेरित होकर तथा बोल-चाल की भाषा में अभिव्यक्ति की स्वाभाविकता और प्रचार की सुविधा समझकर ब्रजभाषा का जन्मजात अधिकार खड़ीबोली को सौंप दिया तब साधारणत: लोग निराश ही हुए । इसके साथ-साथ रीतिकाल की प्रतिक्रिया भी कुछ कम वेगवती न थी । अत: उस युग की की कविता की इतिवृत्तात्मकता इतनी स्पष्ट हो चली कि मनुष्य की सारी कोमल सूक्ष्म भावनाएं विद्रोह कर उठीं ।"[3]

---

१ – पल्लव की भूमिका, पृष्ठ-९ ।
२ – देखिए 'प्रसाद' का 'यथार्थवाद' शीर्षक लेख, 'पल्लव' का 'प्रवेश' और प्रेमचन्द का प्रगतिशील लेखक संघ के प्रथम अधिवेशन में अध्यक्षीय भाषण ।
३ – आधुनिक कवि-९, पृष्ठ-९५ ।

आधुनिक युग में छायावाद के पूर्व भारतेन्दु काल से ही यह भावना प्रारम्भ हो गयी थी। जिसका आभास पहले पहल, जैसा कि शुक्ल जी ने लिखा है, श्रीधर पाठक ने दिया। अभिव्यंजना वैशिष्ट्य, प्रकृति निरीक्षण की विशेषता, और आत्मानुभूति ये तीन तत्व शुक्ल जी ने स्वच्छन्दतावाद के माने हैं और इन तीनों गुणों को श्रीधर पाठक की कविता में देखा है। इसी आत्मानुभूति के अन्तर्गत कवि की दार्शनिक दृष्टि निर्मित होती है। यह दृष्टि स्वच्छन्दतावाद का अंतिम चरण है। इस अंतिम चरण पर पहुंच कर हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी कविता छायावादी कही गयी है। श्रीधर पाठक ने इस दिशा में प्रथम चरण रखा है, द्वितीय चरण का निर्माण द्विवेदी युग में होता है।[१] इन सबका अध्ययन हम इसी शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में कर चुके हैं।

इन सब साहित्यों के साथ ही अंग्रेजी, बंगला और उर्दू कविताओं ने भी छायावाद की पृष्ठभूमि तैयार की है। इन सबके विषय में विद्वानों ने प्रचुर मात्रा में प्रकाश डाला है। अतः उनकी ओर केवल यहां संकेत मात्र कर दिया गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियां :

पिछले पृष्ठों में छायावादी काव्य की जिन राष्ट्रीय परिस्थितियों की चर्चा की गयी है उनकी प्रेरणा विदेशी प्रभाव से उत्पन्न होने वाली घटनाओं से है। देश में ब्रिटिश शासन की स्थापना से ही अन्तर्राष्ट्रीय प्रभावों का सूत्रपात होता है। द्विवेदी युग में अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव आए तो अवश्य, परन्तु जनता उन्हें आत्मसात् न कर सकी। छायावाद युग तक आते-आते जनता उनसे प्रभावित होने लगी थी।[२]

विज्ञान के विकास से अन्तर्राष्ट्रीयता अधिक पनपी। रेल, तार, डाक, जहाज, बिजली आदि साधनों के कारण देश काल की दूरी कम होती गयी। पूंजीपतियों के गुट में ब्रिटेन का उत्थान और पतन भी हमारे नेताओं ने देखा। प्रथम विश्व युद्ध के बाद जनता

---

१ – छायावादी काव्य और निराला : डा० शान्ति श्रीवास्तव, पृष्ठ – ५८।
२ – आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका : डा० बलभद्र तिवारी, पृष्ठ – १५८।

मी राजनीति में रुचि लेने लगी । वैयक्तिक जीवन की ऐकान्तिकता का प्रभाव बढ़ने लगा । जीवन अधिक संघर्षमय प्रतीत होने लगा । भौतिकतावादी सभ्यता ने जीवन के शान्ति और प्रेममय पक्ष का ऐसा तिरस्कार किया कि व्यक्ति प्रकृति की ओर अधिक उन्मुख हुए । इसी कारण हम छायावादी कवियों में प्रकृति की अधिक चर्चा और यांत्रिक युग का विरोध पाते हैं :-

" प्रकृत शक्ति तुमने यंत्रों से सबकी छीनी
शोषण कर जीवन बना दी जर्जर झीनी । " (कामायनी : संघर्ष)

संघर्षमय जीवन और कोलाहल में व्यक्ति की चेतना का घुटन कवि नहीं सहन कर सका । उसकी कल्पना-सुख एकान्त-विहार और स्वप्न-दृष्टि होने की प्रवृत्ति बढ़ती गयी :-

" ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे - धीरे । "

प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध में छायावादियों के प्रारम्भ और परिपाक काल में ही हुए थे । अतः इनका प्रभाव भी इस काव्य पर है । " प्रथम विश्वयुद्ध से द्वितीय विश्वयुद्ध तक का काल सैद्धान्तिक राजनीति की दृष्टि से पूंजीवाद व साम्यवाद, व्यावहारिक राजनीति की दृष्टि से राष्ट्रीयता व अन्तराष्ट्रीयता तथा सामाजिक दृष्टि से व्यक्ति व समाज के भीषण संघर्ष का काल है । " १

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद १९२७ में व्हार्साय संधि हो गयी । अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, सुरक्षा और शान्ति के लिए लीग आफ नेशन्स की स्थापना हुई । यह विश्व शान्ति की ओर प्रथम प्रयास था । विश्व के राष्ट्र एक स्थान पर बैठकर सुख और शान्ति के लिए प्रयास करने लगे । परन्तु युद्ध चलते रहे और लीग आफ नेशन्स भी असफल रहा । १९३७-३८ में इटली-एबीसिनिया का युद्ध अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से अधिक अशान्तिजनक

---

१ - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य : डा० रामेश्वर दयाल खण्डेवाल : पृष्ठ ३१४ ।

प्रतीक हुआ । द्वितीय विश्व युद्ध हुआ और उसने भी हमारी राष्ट्रीय स्थितियों पर प्रभाव डाला । १९१७ में रूस की क्रान्ति हुई जिसका प्रमुख उद्देश्य था - पूंजीवाद का विनाश और मानव समाज में समानता का आरोपण । प्रसिद्ध छायावादी कृति ' कामायनी ' में इसका स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है :-

' विषमता की पीड़ा से व्यस्त,
हो रहा स्पंदित विश्व महान । ' (कामायनी : श्रद्धा)

और पुन:

' क्यों इतना आतंक ठहर जाओ गर्वीले
जीने दे सबको, फिर तू भी सुख से जाले । ' (कामायनी:स्वप्न)

आर्थिक क्षेत्र में, देश के विचारक अन्तर्राष्ट्रीय विद्वानों जैसे, माल्थस, स्मिथ, रिकार्डो, मिल आदि के - के सिद्धान्तों से प्रभावित हुए और उनके पठन-पाठन की व्यवस्था भी हुई । ' ऐसा प्रतीत होता है कि जिन भयंकर संघर्षों का वहन राजनीति कर रही थी, साहित्य उससे अछूता नहीं रह सका । समाज की व्यवस्था के अन्तर्गत कवि बाह्य और आन्तरिक संघर्षों में व्यस्त था । कलाकार शनै: शनै: बाह्यजीवन से पराङ्मुख होता गया । ' १

इस प्रकार कुल मिलाकर वैज्ञानिक आविष्कार, प्रथम व द्वितीय महायुद्धों, रूसी क्रान्ति और नवीन आर्थिक विचारों ने मिलकर इस युग की विचार सरणि को प्रभावित किया और तद्युगीन साहित्य में उसकी अभिव्यक्ति हुई । अत: अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का भी छायावादी युग के निर्माण में महत्वपूर्ण योग रहा है ।

---

१ - आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका: डा० बलभद्र तिवारी, पृष्ठ १६० ।